पाठ योजनाः विविध मान्यताओं की पड़ताल

शोभा सिन्हा

स्थाई शिक्षक बनने से पहले किसी भी स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को कई रीति-रिवाज़ों से होकर गुज़रना पड़ता है। पढ़ाए जाने वाले पाठों की योजनाओं को लिखना उनमें से एक है। ये विद्यार्थी (स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक) पाठ योजना की छोटी-से-छोटी बारीकियों को तय करने में बहुत सारा समय और ऊर्जा लगाते हैं। वे इसे लिखने में लगने वाले समय को समय की बरबादी मानते हैं और इसे एक दण्ड के रूप में लेते हैं। हालाँकि जल्दी ही वे इस हकीकत को स्वीकार कर लेते हैं पर उनमें से कइयों को इसे लिखने की उपयोगिता समझ में ही नहीं आती। अक्सर ऐसा होता है कि ये शिक्षक, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम को पूरा करने और 'असली शिक्षक' बनने के बाद इस योजना प्रारूप का उपयोग कभी नहीं करते। हालाँकि शिक्षक प्रशिक्षक पूरी तैयारी के साथ कक्षा में जाने की ज़रूरत पर कभी प्रश्न खड़ा नहीं करते, पर उनमें से कई ऐसे ज़रूर होते हैं जो

पाठ-योजना की रूपरेखा और उसकी निम्नस्तरीय गुणवत्ता को लेकर संशय का भाव रखते हैं। एक तरफ, जहाँ कुछ शिक्षक प्रशिक्षक पाठ योजनाओं की गैर-लचीली और अपरिवर्तनीय प्रकृति तथा उसके घातक परिणामों के बारे में चिन्तित रहते हैं। दूसरी तरफ, ऐसे शिक्षक प्रशिक्षक भी हैं जो पाठ योजना को अपने आप में ही साध्य मानते हैं और उसे बनाने के उद्देश्य को समझने में विफल रहते हैं। मैंने हाल ही में एक समीक्षा बैठक में हिस्सा लिया था जहाँ बोर्ड के सदस्यों को बुनियादी सैद्धान्तिक मान्यताओं की बजाय पाठ योजना को लिखने से जुड़ी तकनीकी बातों की ज़्यादा चिन्ता थी। उन्हें वर्तनी, व्याकरण, साफ-सुथरे ढंग से लिखने, और इसी तरह की अन्य बातों की फिक्र थी। एक बार एक सदस्य इसलिए बहुत व्यथित हो गई थीं कि एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका अँग्रेज़ी (ईएसएल) का पाठ पढ़ा रही थी पर उसने पाठ योजना हिन्दी में लिख दी थी। दुर्भाग्यवश, उस बोर्ड सदस्य का ज़ोर पाठ योजनाओं से जुड़े रस्मों-रिवाज़ों पर ज़्यादा था बजाय की उसकी व्यवहारिक प्रकृति से। मैं सोच में पड़ गई कि आखिर क्यों वे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका से यह पूछने की बजाय कि वे सिद्धान्त और व्यवहार के बीच के ज़रूरी सम्बन्धों को कैसे स्थापित कर पा रही थी, इतने मामूली प्रश्न पूछ रही थीं। मेरे हिसाब से ज़्यादा महत्वपूर्ण बात थी ईएसएल को पढ़ाने की स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका की योजनाओं की पड़ताल करना। अपनी योजनाओं को रेखांकित करने के लिए उसने जिस भाषा का चयन किया था उसका महत्व नगण्य था।

इन सभाओं और टिप्पणियों ने मुझे यह सोचने पर मजबूर कर दिया कि शिक्षक प्रशिक्षकों के रूप में क्या हमने यह समझा भी है कि पाठ योजना बनाने की इस प्रक्रिया का अर्थ दरअसल है क्या? इसे एक ऐसे पवित्र दस्तावेज़ के रूप में देखा जाता है जिसे किसी शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम की आवश्यकताओं को लिखने और पूरा करने के लिए लिखा जाना चाहिए। शिक्षक प्रशिक्षकों को दरअसल इस बारे में चिन्तित होना चाहिए कि पाठ योजनाएँ किस प्रकार शिक्षक प्रशिक्षण के लक्ष्यों को पूरा करने में योगदान करती हैं। हमें अपने लक्ष्यों के बारे में भी स्पष्ट होने की ज़रूरत है। क्या हम खुद को मौजूदा शिक्षा व्यवस्था के उपयुक्त ढालना चाहते हैं या उस पर सवाल खड़े करना चाहते हैं? हमें पाठ योजनाओं के अन्तर्निहित सीखने-सिखाने की प्रक्रिया से जुड़ी मान्यताओं की भी बारीकी से पड़ताल करने की ज़रूरत है।

इस पत्र में, सबसे पहले मैं पाठ योजनाओं से जुड़ी समस्याओं और

बुनियादी धारणाओं की चर्चा करूँगी। दूसरे भाग में, मैं इन समस्याओं को सुलझाने के वैकल्पिक तरीकों की पड़ताल करूँगी।

समस्याएँ और बुनियादी धारणाएँ

पाठ योजनाएँ एक बेहद थकाऊ और उबाऊ संरचना पर आधारित होती हैं जिसमें उद्देश्य (जिसमें व्यापक, विशिष्ट, व्यवहार-सम्बन्धी, भावात्मक और मनोप्रेरक सम्बन्धी उद्देश्य शामिल होते हैं); उपयोग की जाने वाली सामग्री; पृष्ठभूमि; कार्यविधि (जिसमें शिक्षण के बिन्दु, पद्धति, विकासात्मक प्रक्रिया शामिल होती है); सार; आकलन और ब्लैकबोर्ड पर दिए जाने वाले सार-वर्णन के उदाहरण शामिल होते हैं। यह कोई सम्पूर्ण सूची नहीं है और ज़रूरी नहीं है कि ये सभी पहलू सभी योजनाओं में शामिल हों। लेकिन इससे किसी पाठ योजना के विस्तृत ढाँचे तथा उसे तैयार करने के लिए किए जाने वाले काम का अच्छा खासा भान हो जाता है।

यदि कोई व्यक्ति पाठ योजनाओं में बदलाव की किसी रचनात्मक अभिव्यक्ति को तलाशने की आशा रखता है तो उसे सिर्फ निराशा ही हाथ लगेगी। मूलतः ये योजनाएँ उतनी ही हताशाजनक हैं जितना आम तौर पर होने वाला शिक्षण। इसके अन्दर कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की सोच को लेकर कुछ भी नया नहीं होता। बच्चे को ज्ञान व जानकारियों का निष्क्रिय ग्राहक मान लिया जाता है, ज्ञान बस पाठ्यपुस्तकों में होता है तथा शिक्षक उसे बच्चों तक पहुँचा देता है। बहुत थोड़ी पाठ योजनाएँ ऐसी होती हैं जो कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की बुनियादी प्रकृति को चुनौती देती हैं। शिक्षण के इस पारम्परिक रूप तक पहुँचने के लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक निश्चित ही पाठ योजनाओं के बेहद घुमावदार रास्ते को अपना लेता है।

सामान्यतः योजनाओं के उद्देश्य ऐसे होते हैं जो बच्चे पर और सीखने की प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करने की बजाय उस विषयवस्तु पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिस पर एक तय समय-सीमा में अधिकार हासिल करना होता है। शिक्षण-प्रशिक्षण के विद्यार्थियों की योजनाओं से लिए गए निम्नलिखित उद्देश्य इस बात को स्पष्ट करते हैं:

- बच्चे अलग-अलग पेड़ों और वनस्पतियों के नाम पहचानेंगे
- वे द्वितीय विश्वयुद्ध के तात्कालिक परिणामों को जान पाएँगे
- वे सिंचाई के साधन के बारे में जानेंगे
- वे अर्थशास्त्र और अर्थव्यवस्था के बीच के अन्तर को समझेंगे

- वे प्रमुख खाद्य फसलों से जुड़ी मिट्टी की दशाओं के बारे में जानेंगे
- वे वसा के विभिन्न स्रोतों की सूची बनाएँगे
- वे ऊर्जा को परिभाषित कर पाएँगे।

इसके बाद ये बिन्दु जिस अध्याय में हैं उसे कई भागों में विभक्त कर दिया जाता है और प्रत्येक भाग को पाठ योजना में 'शिक्षण बिन्दुओं' या 'विषयवस्तु' के रूप में सूचीबद्ध कर दिया जाता है जिसके साथ एक स्तम्भ भी होता है जिसमें बताया जाता है कि बच्चे इस जानकारी को किस प्रकार हासिल करेंगे। इस पद्धति में मुख्य भूमिका शिक्षक के व्याख्यान की है और यदा-कदा यह जानने के लिए प्रश्न किए जाते हैं कि बच्चों को समझ में आया है कि नहीं। प्रश्नों की प्रकृति सामान्यतः मूल्यांकन की होती है और उन्हें विषय की गहराई से पड़ताल करने के लिए उपयोग नहीं किया जाता। कभी-कभार स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक शिक्षण के अपने तरीके में प्रदर्शन (विज्ञान में), या फिर कोई चार्ट या मानचित्र दिखाने, प्रश्नावली तथा यदा-कदा नाटक को शामिल कर लेते हैं।

पाठ योजनाएँ व पाठ्यपुस्तकें

इन पाठ योजनाओं की एक काफी आम विशेषता, खास तौर से अगर वे ऊँची कक्षाओं के लिए बनाई गई हों, यह होती है कि वे बेहद लम्बी होती हैं। अक्सर उनमें इस्तेमाल की जा रही पाठ्यपुस्तक के पूरे अध्याय को दोहरा दिया जाता है। ये योजनाएँ पूरी तरह से पाठ्यपुस्तक पर निर्भर होती हैं और 'सीखने के बिन्दु' पाठ्यपुस्तक के अध्यायों के अनुरूप होते हैं। वांछित 'शिक्षण बिन्दुओं' तक पहुँचने के लिए कभी-कभार बीच में प्रश्न भी डाल दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, मैंने जनसंख्या सम्बन्धित अर्थशास्त्र के कई अध्यायों का अवलोकन किया। अलग-अलग स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों ने इसे व्याख्यानों और सवालों के माध्यम से पढ़ाया। दिलचस्प बात है कि, जिन बिन्दुओं को उन्होंने प्रस्तुत किया और उन्हें जिस क्रम में जमाया था, वे करीब-करीब एक-दूसरे के समान थे। एकमात्र अन्तर यह था कि एक ने उन्हें ब्लैकबोर्ड पर सूचीबद्ध किया था और दूसरे ने चार्ट में। एक कक्षा में बच्चे कुछ अलग बिन्दु लेकर आए पर उन्हें हटा दिया गया क्योंकि वे पाठ्यपुस्तक में दी गई सूची से मेल नहीं खाते थे। उनसे बात करते समय मैंने पाया कि शिक्षण के लिए उनकी प्रमुख स्रोत सामग्री पाठ्यपुस्तक थी और हालाँकि ऊपरी तौर पर वे बच्चों से सोचने और चिन्तन करने के लिए कहते थे, लेकिन सही उत्तर जो कि पाठ्यपुस्तक के अध्याय पर आधारित होता था, पहले से ही उनकी योजना में रहता

था। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक की कक्षा में पाठ्यपुस्तक की वैसे ही सर्वप्रमुख भूमिका थी जैसे कि किसी नियमित शिक्षक की कक्षा में होती है।

यदि हम स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक द्वारा शिक्षण के दौरान होने वाले आदान-प्रदान में इस्तेमाल की जाने वाली भाषा की पड़ताल करें तो हम कक्षा के सन्दर्भ में सीखने को लेकर उनकी सोच के बारे में महत्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि प्राप्त करेंगे। पाठों को 'पढ़ दिया जाता' है या 'पेश कर दिया' जाता है और बिन्दुओं को 'पूरा' कर लिया जाता है। यह शब्दावली कक्षा के सन्दर्भ में ज्ञान को लेकर उनकी मान्यताओं को स्पष्ट करती है। वे इसे तय किया जा चुका और पूर्व-निर्धारित मानते हैं। उनके अनुसार शिक्षक का काम है इस ज्ञान या जानकारी को बच्चों तक पहुँचा देना और बच्चों का काम है उसे निष्क्रिय रहकर ग्रहण कर लेना। बच्चों को इसका सृजन करने की गुंजाइश नहीं दी जाती। ज्ञान के सृजन से जुड़ी प्रक्रिया-सम्बन्धी पहलुओं पर लगभग कोई ध्यान नहीं दिया जाता। ज्ञान को बस पाठ्यपुस्तक में बसने वाली चीज़ मान लिया जाता है। निम्नलिखित उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते हैं।

एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपनी पाठ योजना में इस बात को समझाया कि वह किस प्रकार कक्षा में चर्चा को आयोजित करेंगी। 'वे प्रत्येक महत्वपूर्ण शब्द के लिए पहले विद्यार्थियों के जवाब जानेंगी और फिर ऐसे हर शब्द को समझाएँगी'। इस उदाहरण से यह स्पष्ट है कि हालाँकि वे चर्चा के प्रारूप का उपयोग कर रही थीं पर उन्हें इस बारे में ज़्यादा भरोसा नहीं था कि बच्चे कोई महत्वपूर्ण बात कह सकते थे। तो उन्हें कक्षा में भागीदारी के लिए थोड़ी-सी प्रतीकात्मक जगह देकर उन्होंने बच्चों को सर्वाधिक 'सही' व्याख्या दी।

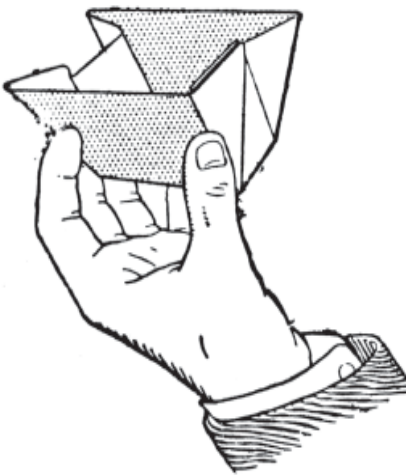

एक अन्य स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक ने पहले कठोर और मृदु जल के बीच के अन्तरों को समझाने की योजना बनाई और फिर एक प्रयोग के द्वारा उनके अन्तरों को प्रदर्शित किया। उन्होंने अपने विद्यार्थियों को इस प्रयोग के दौरान इन दोनों तरह के जल के बीच

के अन्तर देखने को कहा। इस मामले में, प्रयोग सिर्फ एक तथ्य को सुनिश्चित करने के लिए किया जाना था, यह अपने आप में ज्ञान का कोई स्रोत नहीं था। इस प्रदर्शन का परिणाम पहले से ही तय था।

एक और मामले में, मैंने शिक्षक-प्रशिक्षण की एक विद्यार्थी को किसी विषय पर एक चर्चा का आयोजन करने की सलाह दी। लेकिन, वह इस बात को लेकर चिन्तित थी कि उसने अपनी पाठ योजना में जिस तरह से इस विषय के मुख्य बिन्दुओं को सूचीबद्ध किया था, बच्चे उन्हें पहचान नहीं पाएँगे। ऐसी ही एक अन्य विद्यार्थी ने मुझे बताया कि जब बच्चे 'चर्चा' कर रहे होते थे तो उसे लगातार बीच में हस्तक्षेप करना पड़ता था ताकि बच्चे गलत उत्तर न दे दें। बिलकुल स्पष्ट था कि इनमें से कोई भी बच्चों के दृष्टिकोण पर या तर्कसंगत विचारों को सामने लाने की उनकी क्षमता पर भरोसा करने के लिए राज़ी नहीं थीं। ये दोनों ही ज्ञान को तथ्यात्मक और पूर्व-निर्धारित मानती थीं।

शिक्षक तथा बाल केन्द्रित शिक्षा

यह बात दिलचस्प है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बहुत जल्दी 'बाल-केन्द्रित' शब्द से परिचित हो जाते हैं। लेकिन वे इसे पूर्णतः भावात्मक अर्थों में लेते हैं यानी बच्चों के साथ मित्रवत, प्रेमपूर्ण और दिलचस्प रहना। बच्चे सीखते वक्त जिन संज्ञानात्मक (कॉग्निटिव) प्रक्रियाओं से गुज़रते हैं उनकी समझ इस अर्थ में शामिल नहीं रहती। विरले ही ऐसा होता है कि पाठों में बच्चे की विकासात्मक ज़रूरतों पर विचार किया गया हो या अपने खुद के विचार या दृष्टिकोण रखने के लिए उसे श्रेय दिया जाता हो। ऊपर दिए गए सारे उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते हैं। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका नहीं देना चाहते। इन कक्षाओं में अपने से चीज़ों की खोजबीन करने और उन्हें समझने के प्रयास को सही नहीं माना जाता। वे भले ही अपने शिक्षा पाठ्यक्रमों में शिक्षक की मार्गदर्शक की भूमिका के बारे में बात करते हों, लेकिन असलियत में वे बच्चों पर इतना भरोसा नहीं करते कि उन्हें चीज़ों के बारे में अनुमान लगाने या उनकी पड़ताल करने के मौके दिए जाएँ। इसलिए, भले ही शिक्षा पाठ्यक्रमों में बाल-केन्द्रित पद्धतियों को शामिल किया जाता हो, लेकिन असलियत में इसे सिर्फ सतही रूप से समझा जाता है। संज्ञानात्मक अर्थों में इसे बिलकुल भी नहीं समझा जाता।

इस बात पर ध्यान देना दिलचस्प है कि यही विद्यार्थी बड़ी जल्दी स्कूली व्यवस्था की आलोचना करने लगते हैं। वे भारत में शिक्षा की दुखद

स्थिति से अवगत होते हैं और नवीनता तथा बदलाव की ज़रूरत को पहचानते हैं। लेकिन, नवीनता की उनकी रचना अपने आप में एक दिलचस्प अध्ययन साबित होगा। अक्सर, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को लगता है कि यदि उसी विषयवस्तु को वे आकर्षक या 'चुलबुले' ढंग से वर्णन करें तो उनकी योजना मौलिक योजना हो जाती है। उदाहरण के लिए, मैंने एक विद्यार्थी को माध्यमिक स्कूल में कविता पढ़ाते हुए देखा। उसने एक बेहद जटिल गतिविधि की योजना बनाई थी। बच्चों ने कविता पढ़ी और फिर वे समूहों में बँट गए। फिर हर समूह में से बच्चों को सामने आना था और उन्हें आँखों पर पट्टी बाँध दी गई। उन्हें कविता की विषयवस्तु से जुड़ी एक तस्वीर को छूना था और तस्वीर के इस छुए गए हिस्से (ऊपरी, बीच वाला, या निचला) के आधार पर उन्हें बक्से से एक प्रश्न चुनना था। बक्से में तीन अलग-अलग रंगों के कागज़ों में प्रश्न लिखे हुए थे। तो यदि वे ऊपरी भाग को छूते तो उन्हें हरे कागज़ के टुकड़े में लिखा गया प्रश्न चुनना था इत्यादि। प्रश्न चुनने के बाद उन्हें उसका उत्तर देना था और कक्षा के बाकी बच्चों को इसे लिखना था। इस विस्तृत गतिविधि के परिणामस्वरूप बच्चों ने कविता के स्मरण पर आधारित कुछ प्रश्नों के उत्तर दिए जैसे कवि का नाम, कविता में पंक्तियों की संख्या, और तुकान्त शब्द। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपनी पाठ योजना में लिखा कि उसने यह गतिविधि इस ढंग से इसलिए रची थी ताकि विद्यार्थियों में कविता को लेकर रुचि जगे और उनका उत्साह कायम रहे। दुर्भाग्यवश, उसके ईमानदार प्रयासों के बाद भी, जहाँ तक कक्षा में कविता को पढ़ने की केन्द्रीय गतिविधि का सवाल था उसमें कोई खास बदलाव देखने को नहीं मिला था। शिक्षिका के सवालों से बच्चों की समझ या कविता के प्रति उनकी प्रतिक्रिया के बेहतर हो जाने की सम्भावना नहीं थी। उसकी तरह कई शिक्षक कविता पढ़ाकर उसके बारे में तथ्यात्मक सवाल पूछते हैं। उसने अपनी सामग्री तैयार करने में दो घण्टे बरबाद किए थे। इतनी मेहनत करने के पीछे उसकी ईमानदारी और तत्परता प्रशंसा के योग्य है लेकिन बुनियादी अर्थों में साहित्य को पढ़ने की उसकी समझ आम तौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले तरीकों से बहुत भिन्न नहीं थी। सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान की बुनियादी प्रक्रिया अनछुई रही, बस उसमें आभूषण जोड़ दिए गए।

नवीनता कई अन्य बेतुके रूपों में सामने आती है। ऐसी विस्तृत गतिविधियों के अलावा स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक व्यापक रूप से सहायक दृश्य सामग्री का उपयोग करते हैं। एक ऐसे देश में जहाँ पाठ्यसामग्री व साधनों के

मामले में कक्षाओं में बहुत-सी कमियाँ होती हैं, ऐसी नूतनता भी बहुत महत्वपूर्ण दिखाई देती है। लेकिन, दुखदायी बात यह है कि इस प्रकार की नवीनता भी सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में कोई आमूलचूल परिवर्तन नहीं करती। सिर्फ रंगीन थेगड़े जोड़ दिए जाते हैं, उदाहरण स्वरूप, बड़े भारी प्रयास के बाद बनाए गए पोस्टर। लिहाज़ा किसी ग्राम पंचायत पर बनाए गए पोस्टर में किसी मेज़ के इर्द-गिर्द पगड़ी बाँधे कई आदमी दिखाई देंगे, या किसी जानवर पर कोई कविता पढ़ाने के लिए शिक्षक को उस जानवर का पोस्टर लगाना मजबूरी लगेगी, या शिक्षण-प्रशिक्षण का विद्यार्थी जिस विषय को पढ़ा रहा होगा वह उससे सम्बन्धित बिन्दुओं को लिखकर कक्षा के समक्ष दिखाएगा जबकि वे बिन्दु पहले से ही पाठ्यपुस्तक में दिए गए होते हैं। ये विस्तृत उपाय बच्चों की समझ को बढ़ाने में किसी भी तरह का योगदान नहीं करते। ये सिर्फ कार्यक्रम की ज़रूरतों को पूरा करने में मदद करते हैं।

कई स्कूलों में जाकर स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों से बात करने के बाद इस हकीकत ने मुझे बड़ा अचम्भित किया है कि योजना बनाने से पहले बमुश्किल ही कोई पढ़ाई की जाती है। उन्हें इस बात का भी एहसास नहीं होता कि योजना बनाने से पहले शिक्षा के बारे में पढ़ना कितना ज़रूरी है जिससे यह पता चलता है कि सैद्धान्तिक समझ को कितने हल्के तौर पर लिया जा रहा है। वे अपना समय ढेर सारी गतिविधियों में भाग लेते हुए तथा अन्तहीन ज़रूरतों को पूरा करने में गुज़ार देते हैं। इसके अलावा, उनमें से अधिकांश लोग सहायक दृश्य सामग्री (अधिकांशतः पोस्टर) को तैयार करने में व्यस्त रहते हैं जो किसी भी प्रकार की समझ विकसित करने में मदद नहीं करते। यह सब करने के चक्कर में उन्हें पढ़ने का या विभिन्न विचारों पर चिन्तन करने का समय ही नहीं मिलता। इस तरह, वे इतनी विस्तृत पाठ योजनाएँ लिख देते हैं जो किताब के अध्यायों का पुनर्निरूपण भर रह जाती हैं। यह वाकई में शिक्षा कार्यक्रमों की त्रासदी है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक सहायक गतिविधियों में इतने उलझे हुए रहते हैं कि शिक्षण का केन्द्रीय तत्व (सिद्धान्तों के बारे में जानना और कक्षा के सन्दर्भ में उन्हें समझना) उनके ध्यान से निकल जाता है। आखिरकार, पाठ योजनाओं की लम्बाई, विद्यार्थियों द्वारा उनमें लगाया जाने वाला समय और ऊर्जा, तथा किसी भी तरह की सैद्धान्तिक समझ की कमी इस तथ्य को साबित करती है कि शिक्षा विभाग व्यस्तता से भरे कार्यों को सोच-विचार से ज़्यादा महत्व देते हैं।

यहाँ सिद्धान्त और व्यवहार के बीच कोई भी सम्बन्ध नहीं है। सिद्धान्त

विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों में मौजूद रहते हैं जबकि व्यवहार स्कूल की वास्तविकताएँ होती हैं। कई बार तो स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को सूझता ही नहीं है कि उन्हें यह सम्बन्ध करना है। वे इन दोनों बातों को अलग-अलग खाँचों में रख देते हैं। इसीलिए वे पाठों को तैयार करने से पूर्व शिक्षा के बारे में पढ़ने की ज़रूरत से इतने अनभिज्ञ हैं। इस समस्या का एक कारण कक्षा-आधारित शोध का पूर्णतः अभाव होना भी है। ये पाठ्यक्रम व्यापक मुद्दों को उठाते हैं और अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थी ज़रूरी सम्बन्ध अपने आप स्थापित कर लेंगे। कक्षा के अनुरूप सिद्धान्तों की समझ का न होना, पाठ्य सामग्री की कमी, और अच्छे वैकल्पिक प्रतिरूपों का न होना इस समस्या को और अधिक बढ़ा देता है।

सीखने-सिखाने में मददगार पाठ योजनाएँ

पाठ योजना को न सिर्फ सोमवार सुबह की तैयारी में मददगार होना चाहिए बल्कि उन्हें सीखने और सिखाने के बारे में स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों के विचारों को साफ करने का साधन भी होना चाहिए। यह सिद्धान्तों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने की तरफ, तथा कक्षा के सन्दर्भ में सिद्धान्तों के अर्थ को तलाशने की तरफ बढ़ाया जाने वाला पहला कदम है। अतः एक रिवाज़ की बजाय यह लिखने के माध्यम से सीखने का साधन होना चाहिए। इसे शैक्षणिक सिद्धान्तों पर गहराई से विचार करने का और उन्हें समझने का सोचा-समझा प्रयास होना चाहिए। यदि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक इसे सोचने के एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल करता है तभी हम पाठ योजनाओं को लिखने की कवायद को न्यायोचित मान सकते हैं। अन्यथा यह सिर्फ और सिर्फ एक नीरस व निरर्थक कार्य बनकर रह जाता है।

शिक्षकों के बीच इस बात को लेकर काफी असहमति है कि पाठ योजना को किस प्रकार लिखा जाना चाहिए लेकिन सामान्यतः वे दो बातों के बारे में सहमत होते

हैं। पहला, कि योजना बनाना ज़रूरी है, और दूसरा कि इसे सिद्धान्त से जुड़ा हुआ होना चाहिए। हकीकत में इसका अर्थ काफी भिन्न है (खासकर दूसरी बात)। हमने पिछले खण्ड में देखा है कि पाठ योजना में सिद्धान्त के साथ तार जोड़ने की कोई कोशिश नहीं की जाती है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक पाठ योजनाओं को लिखने में कितनी भी मेहनत करें (और सामान्यतः वे बहुत अधिक मेहनत करते हैं), लेकिन वास्तव में, अगर हम शैक्षणिक सिद्धान्तों के साथ तादात्म्य स्थापित कर पाने की बात करें, उनके माध्यम से सोचने की बात करें, और उन्हें कक्षा के सन्दर्भ में अपनाने की बात करें, तो ये लोग इन कसौटियों पर खरा नहीं उतर पाते। शिक्षक प्रशिक्षक, अनजाने में, बहुत सारा समय लेने वाली अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करने में इन लोगों को लगाकर उन्हें इस परिस्थिति में धकेल देते हैं। इस तरह, शिक्षा को लेकर अस्पष्ट विचार इन पाठ योजनाओं में, और परिणामस्वरूप, वास्तविक शिक्षण में घुस आते हैं। समय आ गया है कि हम शैक्षणिक कार्यक्रमों में अस्पष्ट और धुँधले ढंग से तैरती शब्दावली को समझना शुरू करें: 'बाल-केन्द्रित शिक्षा', 'अनुभव-आधारित शिक्षा', 'ज्ञान का सृजन', 'शिक्षा को सुगम बनाना' तथा 'समीक्षात्मक सोच' कुछ ऐसे ही शब्द हैं। हमें इनकी चर्चा करने और कक्षा के सन्दर्भ में उनके निहितार्थों की पड़ताल करने के लिए कड़ा प्रयास करना चाहिए।

वैकल्पिक नीतियाँ अपनाने के लिए हमें इस विषय की तह में जाना ज़रूरी है। कक्षा में होने वाले सीखने-सिखाने के आदान-प्रदान के बुनियादी ढाँचे पर ध्यान देना और उसमें बदलाव करने की ज़रूरत है। जैसा कि पिछले खण्ड में बताया गया है, कक्षा में आम तौर पर होने वाले आदान-प्रदान में बच्चे की भूमिका निष्क्रिय मान ली जाती है जो बस ज्ञान 'ले लेता है', एक शिक्षक होता है जो ज्ञान 'दे देता है', और पाठ्यपुस्तकों में ही ज्ञान बसता है। जब तक इस बुनियादी ढाँचे को चुनौती नहीं दी जाएगी तो नवीनता लाने की कोई भी चर्चा निरर्थक ही रहेगी। नवाचार ऐसा होना चाहिए जो बुनियादी मान्यताओं पर ध्यान दे, न कि सतही मुद्दों पर। सबसे पहले, यह ज़रूरी है कि शिक्षक बच्चों के दृष्टिकोणों को भी स्वीकार करें और उन्हें कक्षा में होने वाले आदान-प्रदान में जगह दें तथा चीज़ों की खोजबीन करने और सीखने की उनकी क्षमता में भरोसा जताएँ। दूसरे, उन्हें कक्षाओं को इस ढंग से आयोजित करना पड़ेगा जहाँ खोजबीन सम्भव हो सके। इसके लिए उन्हें यहाँ-वहाँ से चीज़ें जोड़ने की बजाय सीखने की वास्तविक प्रक्रियाओं पर ध्यान देना

ज़रूरी है। इस प्रकार, बच्चों की भूमिका सक्रिय-रचनात्मक होना चाहिए, और शिक्षक की भूमिका एक मार्गदर्शक की होना चाहिए। पाठ्यपुस्तक पर उनकी अत्यधिक निर्भरता का स्थान कई स्रोतों को ले लेना चाहिए।

पाठ योजनाएँ किसलिए?

योजना का प्रारूप बहुत सरल होना चाहिए और उसमें निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर मिलना चाहिएः जो वे कर रहे हैं वे उसे क्यों करना चाहते हैं? अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उन्हें किन सामग्रियों की ज़रूरत है? इसे प्राप्त करने का उनका मार्ग क्या होगा? उन्हें सीखने-सिखाने की प्रक्रिया में बच्चों को ज़रूरी पर निष्क्रिय भूमिका देने की बजाय अपना ध्यान बच्चों पर लगाने की ज़रूरत है। जब भी शिक्षण प्रशिक्षण के विद्यार्थी अपने दृष्टिकोण को बदलने की इस ज़रूरत को समझने लगेंगे तो पाठ योजनाएँ व्यवहारिक और कहीं ज़्यादा छोटी हो जाएँगी क्योंकि पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु को दोबारा लिखने की मजबूरी समाप्त हो जाएगी।

उद्देश्य अक्सर, योजना बनाने के सर्वाधिक समस्याजनक पहलू होते हैं। जैसा कि पिछले खण्ड में वर्णन किया गया था कि भारत में इसके अन्तर्गत अधिकांशतः छोटे-छोटे भागों में बँटे विषय क्षेत्र आते हैं। बच्चों की विचार प्रक्रियाओं पर कोई सही ध्यान नहीं दिया जाता। उनका मूल्य नहीं समझा जाता और बच्चों के सीखने के बारे में सोचने की बजाय शिक्षक का ध्यान किसी अध्याय को पूरा करने पर लग जाता है। इस प्रकार, पाठ योजनाएँ एक विषय-केन्द्रित कार्य पद्धति को दर्शाती हैं। भले ही कुछ प्रक्रियाओं का वर्णन व्यापक उद्देश्यों में किया जाता है, विशिष्ट उद्देश्यों में जाने पर ध्यान फिर से विषयवस्तु की ओर चला जाता है।

कभी-कभार, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक किसी गतिविधि का वर्णन करके बच्चे पर ध्यान वापस लाने की कोशिश करते हैं। उदाहरण के लिए,

- बच्चे पाठ से जुड़े प्रश्नों के उत्तर देंगे
- बच्चे किसी प्रश्नोत्तर परीक्षा (क्विज़) में भाग लेंगे
- बच्चे कोई कहानी लिखेंगे
- वे अपनी कार्यपुस्तिका भरेंगे

उन्हें लगता है कि इस मामले में वे किसी बच्चे के दृष्टिकोण से चीज़ों को देख रहे हैं। लेकिन, इस तरीके में भी असली ज़ोर बच्चे पर न होकर किसी गतिविधि पर होता है। यह भी सिर्फ नाम के लिए गतिविधि करने

जैसा सतही काम हो सकता है बगैर यह जानते हुए कि इसे करने का उद्देश्य क्या है।

ज़्यादा बेहतर तरीका है इन बातों पर ध्यान केन्द्रित करना कि बच्चा क्या सीख सकता है (तथ्यात्मक ज्ञान के सन्दर्भ में नहीं बल्कि प्रक्रियाओं के बारे में भी), उसे और क्या सीखने में मदद की जा सकती है, तथा बच्चे सोचने के लिए कुछ खास तरह की योग्यताओं को विकसित कर सकें, इसके लिए किस प्रकार से उनकी मदद की जा सकती है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों द्वारा लिखे गए निम्नलिखित उदाहरण इस पद्धति को स्पष्ट करते हैं:

एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका दूसरी कक्षा के अपने विद्यार्थियों को पेड़ों का अवलोकन करवाने के लिए अध्ययन-भ्रमण पर ले जाने की योजना बना रही थी। उसने निम्नलिखित उद्देश्य लिखे:

- (बच्चे) महसूस करें कि किताबें ज्ञान का एकमात्र स्रोत नहीं हैं।
- महसूस करें कि उनके (बच्चों के द्वारा) प्रस्तुत किया गया ज्ञान, वाकई ज्ञान है और सही है।
- विद्यार्थी जीवों, प्राकृतिक क्रियाकलापों, और उन गतिविधियों से परिचित हो जाते हैं, जिनके होने का उन्हें पता नहीं होता और वे विज्ञान को वास्तविक दुनिया से जोड़ने लगते हैं।
- विद्यार्थी वृक्षों की छालों, संरचनाओं, और भौतिक विशेषताओं की तुलना करते हैं।
- वे वृक्ष पर आकार लेने वाले अन्य जीवनों को देखते हैं।

माध्यमिक स्कूल में सूचनापरक अध्ययन के लिए कुछ अन्य उद्देश्य लिखे गए थे:

- बच्चों को स्वतंत्र रूप से जानकारियों को खोजने के लिए प्रेरित करना।
- ज्ञान के स्रोतों की पहचान करना।
- स्वतंत्र रूप से पढ़ने के कौशलों को विकसित करना।
- सन्दर्भ का इस्तेमाल करते हुए अपरिचित शब्दों के अर्थ समझना (न कि सिर्फ हिन्दी के समतुल्य शब्दों पर निर्भर रहना)।

लेखन के लिए कुछ अन्य उद्देश्य लिखे गए थे:

- सामूहिक चर्चा के माध्यम से उभरे सम्भावित विचारों को लिखकर आपस में बाँटना और उनकी पड़ताल करना।

- लेखन-पूर्व कौशलों के बारे में सीखना।

पढ़ने के बारे में निम्नलिखित उद्देश्य लिखे गए थेः

- वे जो कुछ नया पढ़ते हैं और जो वे पहले से जानते हैं, उनमें सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करना।
- कहानियों को सुनकर बच्चों की कहानियों में रुचि जागती है।
- कहानी के किसी किरदार के साथ सहानुभूति रखना।
- विषय रोज़मर्रा के जीवन से जुड़े होने के कारण बेहतर समझ बन पाना।

इन सभी मामलों में ज़ोर बच्चों पर तथा सीखने की प्रक्रियाओं पर रहा बजाय कि तथ्यात्मक ज्ञान पर होने के। इससे उन्हें सिद्धान्त को कक्षा के सन्दर्भ में समझने में भी मदद मिली।

पाठ योजना - विविध स्रोतों से सामग्री

विभिन्न पाठ्य सामग्रियों के बारे में सोचने से स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को न सिर्फ खुद को सुव्यवस्थित करने में मदद मिलती है बल्कि इससे एक और महत्वपूर्ण उद्देश्य भी पूरा होना चाहिए। इसका शिक्षा के लक्ष्यों के साथ नज़दीकी जुड़ाव होना चाहिए। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को उसके द्वारा इस्तेमाल की जाने वाली वस्तुओं को सीखने के समग्र लक्ष्यों के सन्दर्भ में न्यायोचित ठहरा पाना चाहिए। उन्हें सिर्फ नाम के लिए और पाठ योजना में प्रभावशाली सूची बनाने की कोशिश में विभिन्न सामग्री नहीं इकट्ठा करना चाहिए। पिछले खण्ड में, मैंने स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों द्वारा ज्ञान के एकमात्र स्रोत के रूप में पाठ्यपुस्तकों के निर्विवाद उपयोग की चर्चा की है। विरले ही पाठ योजनाओं में अन्य सन्दर्भ मिलते हैं। इन विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य पुस्तकों व पाठ्य सामग्रियों (पत्रिकाएँ, समाचार पत्र) को पढ़ने व उनका उपयोग करने की आदत डालना चाहिए। यह बहुत ज़रूरी है कि स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक खुद भी बहुत सारी अन्य पाठ्य सामग्रियों को देखें और बच्चों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करें। इससे पाठ्यपुस्तकों की सर्वोच्चता को चुनौती देने में तथा गहरी समझ पैदा करने में मदद मिलती है। इसके लिए भी, बहुत-सी तैयारी और अग्रिम योजना बनाने की ज़रूरत होती है। लेकिन, यह दिलचस्प बात है कि कई स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों ने प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साहित्य का सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया है। बड़ी कक्षाओं में भी ये बेहद ज़रूरी है कि बच्चे सीखने के लिए कई स्रोतों से रूबरू हों।

किताबों के अलावा, कक्षा में अन्य प्रकार की सामग्री की भी ज़रूरत होती है। पिछले खण्ड में मैंने गैर-ज़रूरी पूरक सामग्री के इस्तेमाल का वर्णन किया था जिसकी व्यवस्था करने में समय तो बहुत खर्च होता है लेकिन जहाँ तक बच्चों की समझ बढ़ाने का सवाल है तो उसमें ऐसी सामग्री का कोई बहुत योगदान नहीं होता। आकर्षक सामग्री का बन्दोबस्त करने में वे बहुत-सा समय और ऊर्जा गँवाते हैं। सामग्री की सुन्दरता पर ध्यान देने की बजाय हमें उसके उद्देश्य पर ध्यान देना चाहिए। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं ऐसी कक्षा की वकालत कर रही हूँ जहाँ किसी भी तरह की सहायक सामग्री का इस्तेमाल ही न हो। दरअसल, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में उपयोग में आने वाली वस्तुओं का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करने से बच्चों की समझ को बढ़ाने में बहुत मदद मिलती है। उदाहरण के लिए, प्राथमिक कक्षाओं में पत्तियों या कंचों जैसी साधारण चीज़ों को भी बच्चों को विभिन्न अवधारणाओं को समझाने के लिए इस्तेमाल में लिया जा सकता है। माध्यमिक स्कूल में एक स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षिका ने अपने विद्यार्थियों को रसायन शास्त्र की कक्षा में चिकित्सकीय लेबलों को पढ़ने व उनकी चर्चा करने के लिए बुलाया था।

शिक्षक – मार्गदर्शक की भूमिका

कक्षा की प्रक्रियाओं में तबदीली लाने के लिए नियोजन में क्रान्तिकारी बदलाव की ज़रूरत है। अक्सर, स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को 'दी जाने वाली' तमाम विषयवस्तु (पाठ्यपुस्तक पर आधारित 'विषय सूची' या 'शिक्षण बिन्दु') का वर्णन करने में इतने व्यस्त रहते हैं कि वे शिक्षक की मार्गदर्शक की भूमिका को भूल जाते हैं। पाठ योजनाओं के अधिकांश हिस्से में इस बात का वर्णन होता है कि शिक्षक क्या करेगा। उदाहरण के लिए, शिक्षक व्याख्यान देता है, समझाता है, बताता है, सवाल पूछता है और कभी-कभी किसी प्रयोग को दर्शाता है। भारतीय कक्षाओं में बच्चों को ऐसी निष्क्रिय भूमिकाएँ दी जाती हैं कि उन्हें सक्रिय भूमिकाएँ निभाने के लिए तैयार करने हेतु शिक्षण प्रक्रिया को नए ढंग से तैयार करने की ज़रूरत है। इसे हासिल करने के लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षकों को सीखने के प्रक्रियात्मक पहलुओं पर ध्यान देने की ज़रूरत है। उन्हें सीखने के, तथा बच्चों के विकास के प्रासंगिक सिद्धान्तों को कक्षाओं में लागू करने की ज़रूरत है। बेहतर होता है अगर स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक बच्चों को दिमाग में रखकर अपनी योजना बनाएँ तथा पूरी प्रक्रिया को उनकी शब्दावली में व्यक्त करें। बच्चों को चर्चा करने, सवाल करने, अवलोकन करने, विश्लेषण करने, विचारों को लागू करने, प्रयोग करने, परिकल्पना

करने, विचारों को सामने रखने, पढ़ने और लिखने के मौके मिलना चाहिए। शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों के साथ सीखने की ज़िम्मेदारी को बाँटना चाहिए। ऐसा करने के लिए शिक्षकों को बड़ी मेहनत करके ऐसी कक्षा की योजना बनाना होगी जहाँ बच्चे ऐसी लाभप्रद गतिविधियों में जुट सकें।

जिन दो क्षेत्रों पर मैं ज़ोर देना चाहूँगी वे हैं सवाल करना और चर्चा करना। हालाँकि सवालों का उपयोग सभी विषय क्षेत्रों के सभी शिक्षकों द्वारा इस्तेमाल किया जाता है लेकिन सवाल बड़े निराशाजनक होते हैं। वे सामान्यतः स्मरण से जुड़े रहते हैं और किसी प्रकार की सोच या समझ को बढ़ावा नहीं देते। जब शिक्षक ऐसे सवाल पूछते हैं तो उनके जवाबों को सही या गलत के सन्दर्भ में आँकने के अलावा उनके पास कोई चारा नहीं होता। ऐसी परिस्थिति में ज्ञान तथ्यात्मक और पूर्व-निर्धारित हो जाता है। विचारोत्तेजक, खुले सवाल पूछना आसान नहीं होता। शिक्षकों को ऐसे प्रश्न ध्यानपूर्वक तैयार करना चाहिए। उस दिशा में एक शुरुआत ऐसे सवाल तैयार करके हो सकती है जिनका कोई एक सही या गलत जवाब नहीं हो।

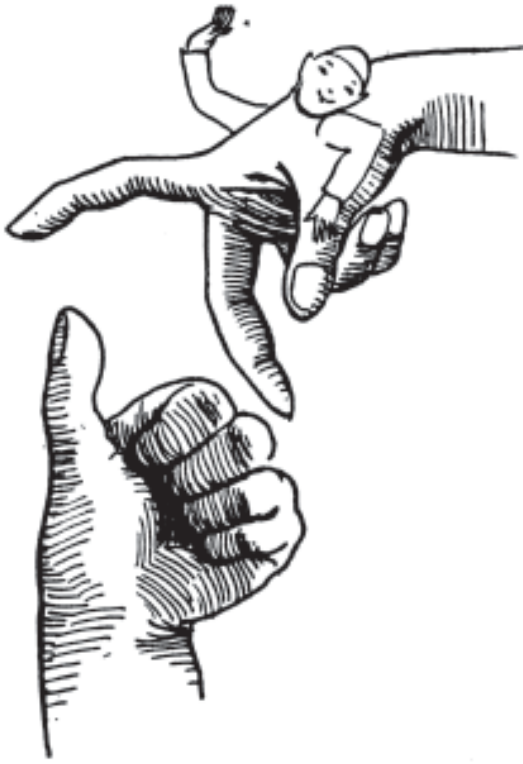

चर्चा, पाठ योजना का एक ऐसा क्षेत्र है जिसे गलत ढंग से समझा गया है और उसकी क्षमता का सही आकलन नहीं किया गया है। कभी-कभी कक्षाएँ बहुत जीवन्त और सक्रिय प्रतीत होती हैं और अच्छी चर्चा का छलावा देती हैं। असलियत में, शिक्षक सवाल पूछते हैं और बच्चे जवाब दे देते हैं। शिक्षक सिर्फ सही उत्तर की तलाश में रहते हैं। विचारों की गहराई से पड़ताल नहीं की जाती। इसलिए, चर्चा की योजना बनाना और उसकी

गतिशीलता को समझना ज़रूरी है। चर्चा ऐसी होना चाहिए कि बच्चे सवाल पूछ सकें, एक-दूसरे के विचारों पर प्रतिक्रिया दे सकें, और विभिन्न दृष्टिकोणों से वाकिफ हो सकें। खुले प्रश्न, समूह-कार्य, और एक-दूसरे के अनुभव बाँटना कुछ ऐसे तरीके हैं जिनके माध्यम से किसी चर्चा को अंजाम दिया जा सकता है। इसलिए, योजना में इन बातों का ज़िक्र होना चाहिए कि चर्चा का संचालन कैसे किया जाएगा, शिक्षक उसमें क्या मार्गदर्शन देंगे, न कि सीधे-सीधे उस विषयवस्तु को सूचीबद्ध करना जिसे विद्यार्थी चर्चा से सीखेंगे।

***

अन्त में, मैं यह कहना चाहूँगी कि पाठ योजना की सतही विशेषताओं पर ध्यान देना ही काफी नहीं है बल्कि उसकी बुनियादी धारणाओं की पड़ताल करना भी ज़रूरी है। यह स्पष्ट है कि शिक्षण की बुनियादी संरचनाएँ नहीं बदलतीं, और नूतन नीतियों के नाम पर सिर्फ रंग-बिरंगे पैबन्द जोड़ दिए जाते हैं। विद्यार्थी पर ध्यान देने वाली वैकल्पिक नीतियों को विकसित करने की ज़रूरत है।

निश्चित ही, योजना बनाने की वैकल्पिक नीतियों को लेकर लोग इस आधार पर संशय जता सकते हैं कि ये वर्तमान स्कूली व्यवस्थाओं में सम्भव नहीं होंगी। ऐसा कोई भी व्यक्ति जिसने शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में काम किया हो, स्कूलों के साथ की जाने वाली वार्ताओं के महत्व को कम करके नहीं आँक सकता। शिक्षक प्रशिक्षकों को यह मानकर नहीं चलना चाहिए कि इन नीतियों को सब हाथों-हाथ स्वीकार कर लेंगे। इसलिए, चर्चाएँ एवं संवाद लगातार चलना चाहिए। बड़ी कक्षाओं में ऐसा करना और भी ज़्यादा चुनौतीपूर्ण होगा क्योंकि इन कक्षाओं में परीक्षाओं का दबाव कहीं अधिक होता है। स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक द्वारा अपनी योजनाओं को लागू करने की गुंजाइश बन सके इसके लिए और ज़्यादा बातचीत की ज़रूरत है। लेकिन प्रेरणादायी बात यह है कि वैकल्पिक नीतियों से जुड़ी योजनाएँ स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक के साथ किए गए वास्तविक काम पर आधारित हैं।

मेरे अनुभव में, जब शिक्षण-प्रशिक्षण के विद्यार्थी शैक्षणिक सिद्धान्तों से परिचित भी होते हैं, तब भी वे उन्हें शिक्षण में लागू करने में असफल हो जाते हैं। आंशिक रूप से ऐसा इसलिए होता है क्योंकि प्रारम्भिक शिक्षण बहुत ही बड़ा अनुभव होता है तथा वे कक्षा के चिर-परिचित ढाँचे पर ही वापस चले जाते हैं। पाठ्यपुस्तकों, परीक्षाओं और परम्परा की संयुक्त

ताकत संघर्ष कर रहे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक पर भारी पड़ती है। इसके अलावा, कक्षा की परिस्थितियों की पर्याप्त समझ के बिना तथा अभिनव शिक्षण के सन्दर्भ में आदर्शों के अभाव में वे शिक्षण की योजना बना लेते हैं। इसलिए शिक्षक-प्रशिक्षकों की भूमिका बेहद अहम हो जाती है। उन्हें अपने विद्यार्थियों को शैक्षणिक सिद्धान्तों के बारे में बताना नहीं भूलना चाहिए तथा उन्हें विभिन्न सम्बन्ध स्थापित करने में मदद करना चाहिए। अत्यधिक बोझ से दबे स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को सहयोग दिए बिना उस पर सारी व्याख्या की ज़िम्मेदारी डाल देना क्रूरता है। हमें सिद्धान्त-व्यवहार सम्बन्धों को अपनी चर्चा का विषय बनाने की ज़रूरत है। हम यह मानकर नहीं चल सकते कि विद्यार्थी स्वयं यह सम्बन्ध स्थापित कर लेंगे।

पाठ योजनाओं में सच्चे बदलाव करने के लिए बहुत सारे प्रयास की ज़रूरत है। इसके लिए स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को पढ़ने का, चर्चा करने का तथा सोचने का वक्त चाहिए। इसलिए यह ज़रूरी है कि गैर-ज़रूरी ज़िम्मेदारियों को कम किया जाए तथा स्थाई सेवा-पूर्व शिक्षक को ज़रूरी बातों पर ध्यान देने के लिए समय दिया जाए। यह बहुत स्पष्ट है कि शिक्षक प्रशिक्षकों को इस कार्यक्रम के बारे में व्यापक रूप से तथा पाठ योजनाओं के बारे में खास तौर से गम्भीरता के साथ पुनर्विचार करने की ज़रूरत है।

शोभा सिन्हा: दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में रीडर हैं। इनकी रुचि के शोध-विषय हैं: बढ़ती साक्षरता, साहित्य के प्रति लोगों की प्रतिक्रिया, कक्षा के सन्दर्भ में साक्षरता का अर्थ और निम्न सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों का साक्षरता-सम्बन्धी विकास।
अँग्रेज़ी से अनुवाद: भरत त्रिपाठी: पत्रकारिता की पढ़ाई। स्वतंत्र लेखन और द्विभाषिक अनुवाद करते हैं। होशंगाबाद में निवास।